



## सन्दर्भ-सूची

---

विषय		पृष्ठ
भूमिका	...	1-11
काव्य	..	१
काव्य-भेद	...	१
पद्य-काव्य	...	२
पिङ्गल-शास्त्र	...	३
छन्द ( वृत्ति )	...	४
लघु-गुरु ( ह्रस्व-दीर्घ ) विचार	...	६
आघट्टक-नोट	...	१०
चिन्ह और गणना	...	१२
गण	...	१३
गण तथा देवता और उनका फल	...	१५
गणान्तर-दोष-परिहार	...	१६
तुक	...	२१
सङ्गीतात्मक-छन्दें	...	२४
छन्द गत मुख्य दोष	...	२६
छन्द या वृत्ति ( परिभाषा-प्रकरण )	...	२६
मात्रिक-सम-छन्द-प्रकरण	...	३४
(१) चौपाई	...	३४
(२) रौला	...	३५
(३) हरिगीतिका	...	३५
(४) तोमर	...	३६
(५) सार	...	३६



विषय		
(२८) शार्दूलविक्रीडित		४४
(२९) मत्तगपन्द	...	४५
(३०) दुर्मिल	...	४८
षष्ठिक समान्तर्गत दरडक-प्रकरण	...	४८
(३१) मनहर	...	४९
द्वन्द्व शास्त्र में गाणित विचार	...	५०
परिभाषायें	...	५०
प्रस्तार	...	५२
माशिक-प्रस्तार	...	५३
माश-प्रस्तार में नष्ट की रीति	...	५५
वर्ण-प्रस्तार-नष्ट	...	५८
उद्दिष्ट	...	५०
माश-उद्दिष्ट	...	५१
मेर	...	५३
एकावली-मेर	...	५४
खण्ड-मेर	...	५८
माश-मेर	...	५९
एकावली-माश-मेर	...	६०
खण्ड-माश-मेर	...	६१
पताका	...	६३
माश-पताका	...	६३
मर्कटी	...	६५
वर्ण-मर्कटी	...	६६
माश-मर्कटी	...	६६
परिनिष्ट	...	६८
	...	६९



## दो शब्द

कवि होने और काव्य करने के लिए सब से आवश्यक बात काव्य-शास्त्र का ज्ञान प्राप्त करना है । साहित्य सेवियों एवं साहित्य जिज्ञासुओं के लिए भी काव्य-शास्त्र का ज्ञान प्राप्त करना न केवल आवश्यक ही है, बल्कि अनिवार्य भी है, क्योंकि उसके बिना साहित्यावलोकन से उन्हें आनन्द प्राप्त होना तो दूर रहा, कतिपय कठिनाइयों का सामना भी करना पड़ेगा और साहित्य से पूर्ण-परिचय भी न प्राप्त हो सकेगा ।

काव्य-शास्त्र के दो मुख्य विभाग हैं:—१. अलङ्कार-शास्त्र जिसमें काव्यान्तर्गत गुण, दोष शब्द-शक्ति (लक्षणा, व्यञ्जना, ध्वनि आदि) अलङ्कार एवं रस आदि का जो काव्य के मुख्य तत्व हैं वर्णन होता है । २:—द्वन्द्व-शास्त्र या पिङ्गल जिसमें कविता के कलेवर की रचना करने वाले वर्णों की सुव्यवस्थित नीतियों एवं रीतियों और उनसे उत्पन्न होने वाले द्वन्द्वों के नियमों का निरूपण किया जाता है ।

अनेक धन्यवाद हैं उन आचार्यों को जिन्होंने शब्द-ग्रह की उपासना कर प्रकृति के मञ्जुलातिमञ्जुल मनों के संनि-रोक्षण के द्वारा सङ्गीत एवं कविता को जन्म दिया है । धन्य हैं महर्षि पिङ्गल जिन्होंने दोनों के सुन्दर सामञ्जस्य के लिए द्वन्द्वों का आविष्कार करके द्वन्द्व-शास्त्र की रचना की है । साथ ही धन्यवाद के पात्र हैं वे आचार्य एवं लेखक भी जिन्होंने इस शास्त्र के सिद्धान्तों पर सुदृढ़ दृष्टिगत करते हुए इसका विकास एवं प्रकाश किया है ।



# सरस-पिङ्गल

## काव्य

यों तो काव्य को कई परिभाषाएँ निम्न निम्न आचार्यों के द्वारा दी गई हैं किन्तु सर्व साधारण एवं सर्वमान्य परिभाषा यही है कि—  
“सुन्दर सरस पदावली, मलों माधुर्य रम्य ।  
स्वानाविक भाषा, हृद्य, मम्य भावभक्तिमान्ध ॥

काव्य कहन है ताहि दुष, . . . . .”  
(‘धोरताल’ हन) ‘नाट्य-निबन्ध से’

अर्थात् स्वानाविक भाषा की वह सुदुर्भट्टल पदावली एवं शान्दावली जितनी मनोरञ्जक, माधुर्यमयी सरलता तथा अनहत धातुपूर्ण पद विन्यास की शैवकता होती है ‘काव्य’ कहलाती है ।

## काव्य-भेद

आचार्यों ने काव्य के निम्न निम्न सिद्धान्तों के अनुसार निम्न प्रकार के भेद किये हैं । जैसे—

- १—भुक्ति और हरय ( नाटक आदि )  
संगीतानक
- २—मद्य काव्य, पद्य काव्य, और चन्द्र ( निमित्त ) ।  
विश्रयानक
- अव्यय काव्य एवं मुक्तक काव्य







वर्णों आदि की गणना, व्यवस्था तथा उनका एक विशेष य स्थान तथा विधान के साथ संगुम्भन करने की रीतियाँ कवि की गई हैं। दूसरा कारण पिङ्गल-शास्त्र के जन्म का कदाचित् भी हो सकता है कि कवियों के लिये पद्य-काव्य के रचनार्थ के मार्ग निश्चिन हो जायँ जिनके द्वारा काव्य, कविता के रूप में होय अपने अभीष्ट को सरलता एवं सुख के साथ पहुँच सके।

गद्य का अपेक्षा पद्य में कुछ ऐसे विशेष गुण हैं जिनसे आर होकर काव्य में सङ्गीतात्मक पद्य वत्ता जाने की आवश्यकता अनिवार्य हुई और पिङ्गल शास्त्र का जन्म हुआ।

कहना न होगा कि पद्य अपने विशेष गुणों के ही कारण एक प्रधानता, रोचकता और व्यापकता को पहुँच गया कि प्रत्येक विषय में हमका समावेश पूर्ण रूप से हो गया, और प्रायः सभी विषय पद्यात्मक हो गये। यह बात विज्ञेयता में है।

सङ्गीत और काव्य के सम्मिश्रण का एकमात्र फल पिङ्गल शास्त्र है, यही कविता को गद्य काव्य से पृथक् करता है।

ध्यान रखना चाहिए कि यद्यपि सङ्गीत का सम्बन्ध काव्य से है और काव्य का भी सम्बन्ध सङ्गीत से है—दोनों में अन्योन्य भय सम्बन्ध है—फिर भी दोनों एक नहीं, वरन् पृथक् पृथक् हैं—दोनों की रीतियाँ तथा नीतियाँ भिन्न ही भिन्न हैं।

## द्वन्द्व ( वृत्ति )

सङ्गीत में सम्बन्ध रखने वाले वर्णों और मात्राओं की एक विनिश्चित व्यवस्थात्मक गद्य की वह गति है जो पद्यवत्ता रखती है और गाई जा सकती है। विचार में रखने की बात यह है कि द्वन्द्व वर्णों ( ह्रस्व, दीर्घादि ) की विनिश्चित व्यवस्था एवं गणना के आधा

पर तथा महीन, लय, ताल एवं राग-रागिनी आदि का उत्कर्ष देने वाली स्वरों की विशेष व्यवस्था के आधार पर नमाधातिव होता है, यही दोनों में मुख्य फरक है।

निष्कर्ष रूप में यों कहना चाहिए कि दुन्द में नात्रालों और वरों की विशेष व्यवस्था एवं गानना होती है, तथा महीनसम्बन्धी लय और गति वाली धारावाहिकता होती है।

कादा प्रकार के होते हैं—हम्य और दीर्घ, अथवा लघु और गुरु।

नोट—हम्य में प्लुत वरों का विचार उन्ना व्याकरण में किया गया है नहीं किया जाता, और उनमें प्लुत का नहीं रक्खे जाते। परिक-हम्य में यह बात नहीं, यही प्लुत का भी स्वयं-प्रका में आते हैं।

हिन्दी-भाषा की हम्यों में आया देना भी होता है कि हम्य का बननी कुछ दीर्घ और दीर्घ का बननी कुछ हम्य रहे जाते हैं। यह बात संस्कृत-भाषा की हम्यों में नहीं पाई जाती है। हिन्दी-भाषा में यह भी देखा जाता है कि कुछ हम्य केमे वर्ग गगने हैं जो न जो हम्य ही होते जाते हैं और न दीर्घ ही, बल्कि उनका उच्चारण हम्य और दीर्घ दोनों स्वरों के बीच जाये स्वर के साथ होता है। यही है कि हमारे व्याकरणों में इन प्रकार के हम्य और दीर्घ के सामानिक-स्वरोच्चार के अन्तर्गत या सूचित करते जाते किन्ती बिना विशेष की जायना नहीं की और इसे वेदना करने का देनाते जाते के हो इसा नियमित किने जाते के किने हो, किने है जैसे—

“एक दिन एक मनुका आया।” यही वाक्य का एक में गुरु ही (दीर्घ) पदा आता है और न वर्णमाला हम्य का गुरु ही।



त्य हो क्यों न हो, कम में कम हम्य-भर फी सहायता के दिना  
 दावि नहीं हो सकता। मयः-होन व्यञ्जन की सत्ता स्वीकार  
 से उप इन्ही लिए व्यञ्जन को अथ-भाजिक माना है।

( २ ) व्याकरण में दीर्घ स्वर है उस दीर्घ रूप को जिसके आधार ह्रस्व-धरा को छोड़कर मन्त्र को त्रिगुणी मात्रा लगती है प्लुत ला है, और इसे मृगित करने के लिए प्लुत-धरा के छोड़ने के बाद पूरा दिया जाता है । किन्तु पिछले मन्त्र में इसका कोई स्थान नहीं होता ।

( ३ ) निम्न प्रकार में शस्त्र को लघु धार दीर्घ से गुरु कहते  
धार इनको स्तम्भ धारों के निम्न दो प्रकार के निम्न विशेष का  
वेग धारों हैं :—

प्रश्न ( १५ ) . .... !

संज्ञा (संज्ञा) ५

( ५ ) प्रमाण रहना चाहिये कि स्वयं और शोधकर्ता का प्रमाण, स्वयं का प्रमाण शोधकर्ता के दावे पर ही निर्भर है । शोध पर जो प्रमाण शोधकर्ता के दावे पर ही निर्भर है । शोध पर जो प्रमाण शोधकर्ता के दावे पर ही निर्भर है ।

संस्कृत एवं अरब का अनुवाद ए. ए. ए.

संस्कृत, हिंदी तथा उर्दू भाषा, इ. आचार्यजी के, अति प्रमुख हैं।

[illegible]

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

[illegible]



होते हैं तो अवश्य ही दीर्घ माने जाते हैं और यह केवल दीर्घ-स्वर ही के कारण, न कि उनकी नानुनासिकता के कारण ।

विसर्ग युक्त वर्ण भी दीर्घ माने जाते हैं, किन्तु ध्यान रहे कि हिन्दी-भाषा में विसर्ग का प्रयोग बहुत ही कम होता है ; केवल कुछ ही ऐसे शब्द हैं जिनके संस्कृत एवं शुद्ध रूप में ही विसर्ग का प्रयोग देखा जाता अथवा किया जाता है । उनके भाषान्तरित रूप भी बिना विसर्ग के प्रचलित हैं ; जैसे :—दुःख और दुख, दुःसह और दुस्तह आदि । इसलिए कहना चाहिए कि यह नियम हिन्दी भाषा में बहुत ही कम लागू होता है ।

य—पदान्त वर्ण विकल्प रूप से गुरु माना जाता है अर्थात् आवश्यकतानुसार यदि पदान्तवर्ण लघु भी है तो भी दीर्घ मान लिया जायगा । जैसे—“भुषन भय भिटाने, धर्मसंरक्षणार्थ” में अन्तिम वर्ण “र्थ” पद के अन्त में होने के कारण, चूंकि नियमानुसार इसे दीर्घ होना चाहिये, दीर्घ माना जायगा । \*

र—उन दीर्घ वर्णों को जो ह्रस्व वर्णों के समान पढ़े या बोले जाते हैं ह्रस्व तथा उन ह्रस्व वर्णों को जो कुछ दीर्घ वर्णों के समान पढ़े या बोले जाते हैं दीर्घ मानना चाहिये ।

जैसे :—‘अथ मोहि भा भरोस हनुमंता ।’

यहाँ “मो” दीर्घ होता हुआ भी चूंकि ह्रस्व बोला जाता है, वही माना जायगा । इसी प्रकार—‘अहह प्रलयकारी दुःखदायी

\* संयुक्ताद्य, विसर्गयुक्त, अक्षर आनुसार ।

वर्ण पदान्त विकल्प से, दीर्घ ‘रक्षण’ विचार ।

“संयुक्ताद्य” दीर्घ, आनुसार विसर्गनिष्ठम् ।

विहरेणवचरं दीर्घ, पदान्तस्थं विकल्पेन । \*



नितान्त, 'यद्वा अन्तिम 'न्त' कुछ दीर्घ सा होता जाता है अन् दीर्घ ही माना जायेगा। प्राचीन कवियों ने (विशेषतया प्रथ भाषा एवं अपघो-भाषा के कवियों ने) ऐसे ह्रस्व वर्णों को दीर्घ ही बना लिया है।

जैसे—'अरिहंक अनमल कीन्ह न रामा।' यहाँ अन्तिम "म" को दीर्घ "मा" कर दिया गया है। इस प्रकार दीर्घ करने के लिये प्रायः दीर्घ आकार, ईकार और ऊकार का प्रयोग देखा जाता है।

ऐसे वर्णों को जो ह्रस्व और दीर्घ दोनों के मध्यस्थ-स्वर या द्ये हुए स्वर से बाले जाते हैं, लघु मानते हैं।

नोट—संगीत में स्वरों के बढ़ाने एवं घटाने की पूर्ण स्वतंत्रता होने से ह्रस्व और दीर्घ का ऐसा सूक्ष्म एवं गूढ़ विचार नहीं होता।

## आवश्यक-नोट

ऐसे शब्दों के पूर्ण का वर्ण जो संयुक्त वर्ण से प्रारम्भ होते हैं यदि उसके बालने में संयुक्त वर्ण के कारण कुछ विशेषता या दीर्घता सी प्रतिभात होती है, लघु होने पर भी दीर्घ माने जाते हैं; जैसे—जगन्नाथ ! मन्नाथ ! गौरीश नाथ ! प्रपन्नानुकम्पित विपन्नार्तिहारिन् । महादेव । । देवेंग ! देवाधिदेव ! स्मरारे पुरारे ! यमारे ! हरेति ।

नोट :—ध्यान रखना चाहिये कि उन्हीं संयुक्तवर्ण के पूर्ण व वर्ण, चाहे वे किसी अन्तिम शब्द के वर्ण ही क्यों न हों, जो किसी शब्द के आदि में आते हैं और ऐसी प्रकृति के होते हैं कि वे अपने पूर्वगत शब्द के अन्तिम वर्ण के साथ शीघ्र ही बाले जाते हैं और इसलिये उसको अपने उच्चारण से विशेष प्रभावित करते हैं, दो

ने जाते हैं। यदि ऐसे संयुक्त वर्ण अपने पूर्ववर्ती 'वर्ण' को प्रभावित नहीं करते तो उसे वे दीर्घ भी नहीं बनाते; जैसे:—

‘मुम्भको न यह कुछ ध्यान था,  
तुम गए हो कर जा रहे।’

यहाँ पर ‘कुछ’ का ह यद्यपि ध्यान के ध्या संयुक्त वर्ण का पूर्ववर्ती है फिर भी चूँकि उससे प्रभावित नहीं है: दीर्घ न होकर ख ही माना गया है। इसी प्रकार स्मृति, स्तब्धन, स्तुति आदि युक्त वर्णों के पूर्ववर्ती वर्णों के गुरुत्व एवं लघुत्व का विचार करना चाहिए।

हमारा विचार तो यह है कि स्मृति आदि शब्दों के स्मृ आदि वर्ण अपने पूर्ववर्ती वर्णों को सदा प्रभावित करते हैं और इसी-कार उन्हें सदा दीर्घ भी बनाते हैं।

ध्यान रहे कि स्मृति आदि शब्दों का प्रयोग-द्वन्द्व की आदि में इसी प्रकार करना चाहिए कि मानों वे लघु हैं। प्रायः ऐसे शब्दों का उच्चारण अस्मृति आदि के समान करके कुछ नवयुवक लोग करते हैं, उन्हें इनके प्रयोग करने में विशेष विचार कर लेना चाहिये।

ध्यान रहे कि “प्रादि” संयुक्त वर्ण दो प्रकार से बोल जाते हैं।

१—द्वित्व रूप में। जैसे:—“अप्रिय” शब्द से सर्वथा है दुःख की सम्भावना” यहाँ “प्रि” का “प्र” द्वित्व रूप में बोला जाता है। अतः इसका पूर्ववर्ती वर्ण गुरु माना जायगा।

२—स्वाभाविक रूप में। जैसे:—“प्रिय अप्रिय” जनों में खता था न भेद” यहाँ “अप्रिय” मत “प्रिय” का “प्र” अपने द्वित्व रूप में न बोला जा कर केवल स्वाभाविक रूप में बोला



## गण

तीन वर्णों के समूह को चाहे उनसे कोई शब्द बनता हो या न बनता हो, अथवा चाहे वे एक शब्द के हों या दो या अधिक शब्दों के हों, एक गण कहते हैं।

एक गण के तीन वर्णों में से आदि, मध्य, और अन्त के वर्णों की गुरुता और लघुता के विचार से अर्थात् गणगत लघु और गुरु वर्णों के व्यवस्था, मर्म एवं स्थान के विचार से गणों के आठ रूप होते हैं।

मगण, यगण, सगण, नगण, भगण, जगण, तगण, और रगण। इन नामों के आद्य वर्ण लेकर निम्न सूत्र बनता है जिसके द्वारा गणों के नाम और लक्षण सरलता से याद रह सकते हैं:—

## “यमाताराजभानसलगम्”

इस सूत्र के द्वारा जिस गण का रूप जानना हो उन्हीं के इसमें दिये हुये आघातार के साथ आगे के दो और वर्ण मिलाने से अभीष्ट गण बन जायगा। जैसे:—मगण जानने के लिये सूत्र में आये हुये “मा” के साथ उसके आगे वाले ता और रा को ले कर “मातारा” बनाओ। इसमें स्पष्ट है कि मगण में तीनों वर्ण अर्थात् आदि, मध्य और अन्त के वर्ण गुरु या दीर्घ हैं और मगण का रूप S S S इस प्रकार है। इसी प्रकार और गणों को भी इसी सूत्र की सहायता से निकाला जा सकता है।

## गण-कोष्टक

गण का नाम	रूप	उदाहरण
सगण	१ ५ ५	अक्षरमा
सगण	५ ५ ५	पुण्यात्मा
सगण	५ १ १	मातृ
सगण	१ १ १	कमल
सगण	१ ५ १	मंगल
सगण	५ १ ५	मालती
सगण	१ १ ५	रत्न
सगण	५ ५ १	देवद

गणों के नाम एवं इनके स्वरों के वाद करने के लिए उक्त  
 १. धार्मिक, दुसरा गण्य गण्य रूप है—

० अक्षर, मंग, अक्षरमा, म, ग, र, मा में लक्ष्मी

२ अ, मा में लक्ष्मी, म, न लक्ष्मी

अक्षर -

अक्षर - अक्षरमा, अक्षरमा

अक्षर - अक्षरमा, अक्षरमा

० भगण में तीनों गुरु, नगण में तीनों लघु :  
 भगण में धादि गुरु, नीकै कै प्रमानिए ।  
 आदि लघु यगण में, मध्य गुरु जगण में ;  
 मध्य जाके लघु होय, रगण सो जानिए ॥  
 अन्त गुरु होय तां, सगण ताहि कहैं कवि ;  
 तगण में अन्त लघु, यों 'रस्ताल' मानिए ।  
 प्रथम के चारि शुभ, दीजिए कवित आदि ;  
 अन्तिम के चारि तजि, अशुभ दखानिए ॥  
 गण-देवता-फल-काष्टक

गण	देवता	फल	शुभाशुभ
यगण	जल	आयु	शुभ
भगण	पृथ्वी	लक्ष्मी	"
भगण	चन्द्रमा	यश	"
भगण	भयं	मुख	"
जगण	सूर्य	नेत्र	अशुभ
रगण	अग्नि	दाह	"
रगण	वायु	विदेश	"
नगण	आकाश	मृत्यु	"

\* धादिगुरुः सूर्यः चन्द्रः, आदिः शुक्रः बुधः, अन्तः शनिः ।

किं तु यं कथं यमो एव यथा, देवताः शुक्रः बुधः शनिः ।



आज कल हमारे नवयुवक कवि प्रायः इस विचार से नहीं होते, किन्तु हमारा यह अनुभव है और हमने कई एक कवियों से भी इसका अनुमोदन प्राप्त किया है कि यह सत्य और शुद्ध है।

जिस प्रकार गलों के शुभाशुभ होने पर विचार किया है, उसी प्रकार बरों के शुभाशुभ होने पर भी विवेचना की है। आचार्यों ने सभी स्वरों को सदा शुभ माना है; और शुभा व्यञ्जनों का वर्गीकरण इस प्रकार किया है:—

नोट:—कितनी कितनी आचार्य के मत से गणगण का विचयम चरण के प्रारम्भ के दो अक्षरों में हो करना योग्य है। व अक्षरों से दो गण बनते हैं, अस्तु कि २ दो गलों के साथ रहने से क्या फल होता है, यह हम नीचे देख रहे हैं:—

?

मगल + नगल = मित्र, है कै तिद्धि फल देत,  
भगल + यगल = दास, दानि पहुँचावते ।

रगल + लगल = रिपु, होत शोकप्रद फल,  
तगल + जगल ये = उदास, कहलावते ॥

मित्र-गल तिद्धि, दास, दास मिलि दानि करै,  
अकल उदास, शत्रु काज विनसावते ।

सुकवि 'सरस्' देखी गए की विवेचना है,  
दन्दन को आदि में सुगल कवि लावते ॥

२

मित्र अरु दास मिलि विजय करवत हैं,  
मित्र औ उदास आय दानि उपजावते ।



मित्र और शत्रु गण मिलि मित्र-नाश करें,  
 दास अथ मित्र, काज सिद्ध करवायते ॥  
 दास जो उदास भिति पीड़ा उपजायत हैं,  
 दास और शत्रु गण मिलि के हरायते ।  
 मित्र जो उदास अथ मित्र, तो है रंघ फल,  
 आदिक उदास, दास । दुख पहुँचायते ॥

१

मित्रन है जो र्व छन्द आदि में उदास शत्रु,  
 गण दुखकारी परिणाम निज जानिये ।  
 शत्रु और मित्र गण मिलि देत शून्य फल,  
 शुभ और दास में शिया को नाश मानिये ॥  
 मित्रन है शत्रु जो उदास जो र्व आदि मोहि,  
 शत्रु उपजायत हैं, येना हूँ प्रमानिये ॥  
 मायन 'मग्न' कवि छन्दन की आदि मोहि,  
 दाय दाय गलन में यो विचार आनिये ॥  
 मायिक छन्दन मोहि बग, दाय गलागल दाय ।  
 बल-शून्य में 'मग्न' कवि, यह विचार मोहि लेयु ॥

नोट —अनेक स्थान में गतों की गिनती प्रथम अष्ट की जाती है । अन्त में दो या एक अक्षर यदि बच जाते हैं यदि छत्रु दूर हो जाय और यदि गुरु दूर हो गुरु माने जाते हैं ।

छन्दन वर्णों में से पाँच वर्णों :—क, छ, र, म, ल ( मध्यमस्थ दास-पदाः ) को आश्रय छन्दन और दूधिन क इत्थं दास-पदा की गीता दी गई है ।

## ‘ गणान्तर-दोष-परिहार ’

अशुभ-गणों के किसी छंद के आदि में अनिवार्य रूप से आने पर उनके द्वारा एवं अशुभ-पक्ष के परिहारार्थ ऐसा कहा गया है कि उन गणों के सम्यग्धी शब्द देवता यात्री हैं अथवा मङ्गल-यात्री हैं तथा यदि छन्द में किसी देवता या देवी शक्ति आदि की स्तुति की गई है तो उसमें अशुभ गणों का विचार नहीं होता ।

० अ :—इसी प्रकार देवता यात्री अथवा मङ्गलयात्री शब्दों के आदि में यदि अशुभ गण भी आवें तो भी कोई आपत्ति नहीं होती ।

प :—यदि इसके अनिवार्य साधारण शब्दों की आदि में अशुभ या दुष्प्रकार आवें तो उनके दौर्घ होने पर अथवा यदि सम्भावना हो कि किसी प्रकार की भुक्ति न आती हो, तो उन्हें दौर्घ कर देने में उनके दौर्घों का परिहार हो जाता है ।

### उदाहरण

१—मातृ-दोषः—

“ धियाः पतिः धीमतिः शान्तिस्तुम् अयम्,  
शर्माप्रदोऽयं समुद्रो मे सदाति । ”

( मातृ-प्राप्त १ अक्षर १ इत्येक )

यहाँ प्रथम मातृ अक्षर होकर अशुभ है, क्योंकि इसका देवता मुख्य और प्रायः होता है, अतः इसमें सम्भवतः सम्प्रदाय शब्द सर्वप्रकार से देवताओं है, इसीसे दोष का निवारण हो गया ।

\* इत्येक व अक्षर १ अक्षर १ इत्येक व अक्षर १

१ अक्षर १ अक्षर १ अक्षर १ अक्षर १ अक्षर १

२:—वर्ण दोषः—

“ रामहिं चिंत रहे थकि लोचन ”

—शो० तुलसीदास

यही रा अशुभ वर्ण है, किन्तु यह देवतावाची शब्द है तथा दीर्घ है इसलिये गद्दोष नहीं, परन्तु दोषमुक्त है।

इसी प्रकार “ हा ! रघुवीर देख रघुराया । ”

(२) छट कंध साया पंच थीम अनेक वर्ण सुमन घने ।

(३) रे ! कवि पोष्य बोलत सम्मारो ॥

(४) मूलत रि होरे, दोऊ रङ्ग रस बेरे तद्दी—

{ (१) भार्याज प्रतीत उर आई ।

{ (१) मृता जा सकता है वैसे जो कुछ देखा सुना कही ।

उपरोक्त सब उदाहरणों में प्रथम वर्ण सभी दूषाकार हैं वे दोषमुक्त इसलिये हैं कि वे या तो देव-स्तवन में हैं या रूप में हैं, तथा शुभगण से सम्बन्ध रखते हैं।

नोट — ध्यान रहे कि शुभाशुभ गणों एवं दूषाकारों विचार मुक्त काव्य में ही मिलेन रूप में करना चाहिये। प्र काव्य में केवल काव्य के प्रागम्भिक छंद या छन्दों में ही। विचार करना उचित है और आगे नहीं। पर काव्य में मूल एवं शुभाशुभ वर्णों का विचार करना आवश्यक अनिवार्य है। प्रथम काव्य के वर्ण में इनका विचार उचित है, जैसे —

(अ) मगरहिं कविजन निवृत उपात ।

(ब) हरे हरी गणपति कम भला ।

(ग) गुरु मकर कम हृदय विपरी ।

(द) भन्ने भयन तुम धायन दीन्हा ॥ इत्यादि ॥

—रामायण

उक्त उदाहरणों के सभी प्रथम-वर्ग शब्दांतर हैं किन्तु वे उन मन्त्र-वाक्य की मध्यगत शब्दों में हैं जो देयाभिदेय के सम्बन्ध में लिखी गई हैं। अतः वे भव पर नया इनके द्वारा उपेक्षणीय हैं।

तुक

तुक—एक प्रसार का यह विनिर संयानुमान है, जिसमें आहुति, स्वर एवं व्यञ्जन-साम्य में शब्दों के चरों के अन्त में ही रक्षणी जाती है।

संयानुमान और तुक में यह अन्तर है कि संयानुमान छंद है वहीं और परम्परा शब्दों में आहुति जाता है। किन्तु तुक परम्परागत शब्दों में ही आहुति का समावेश करता है, अतः संयानुमान का क्षेत्र अधिक व्यापक और विस्तृत है, किन्तु तुक का महोत्तर और निर्दिष्टतामात्र है।

तुक में शब्दों में एक निश्चित स्वररूप और मधुरता आ जाती है। द्वितीयाभा में एकका अन्तः स्वर एवं अन्तर है। ही संज्ञा में स्वर के विपरीत अनुबन्ध-मार्ग ही का स्वरूप है, यद्यपि द्वितीयाभा में भी अनुबन्ध-वर्धिका मिलती है किन्तु यह सभी स्वर में समक ही के समान है। द्वितीयाभा की यह अन्तः एक ही-वर्धिका है, जिसका अनुबन्ध बहु काल में भी किया है।

“द्वय” ही में इनके विवेचना का है, जिसके मूल स्वर में हम मोटे के से है —

तुक के मुख्य तीन हैं—

१— द्वाय तुक

२— त्रय तुक

३— चतुर् तुक



२:— स्वर-भोजितः—जहाँ तुक के दोहन अंतिम स्वरों में हो  
ताब हो, और व्यञ्जनों में वैयर्थ रहे ।

नोटः—हिन्दी में तो इस तुक को न्यूनता ही है, किन्तु उर्दू में  
इसकी बाहुल्यता ही पाई जाती है ।

३:— शुभितः—जिसमें चरनों के केवल मर से अन्तिम चरों  
में हो नाब्य रहता है, अर्थात् चरान्त के केवल एक ही चर चर  
मिलते हैं ।

नोटः—निरुध्द या अथम-तुकाः—उक्त दोनों प्रकार के तुकों में  
यह अधिक विशेषादि का होता है इसमें धरावृत्ति या धरा-नाम  
का कोई भी नियम नहीं रहता ।

इन्के भी तीन रूप होते हैं—

१:—अनिल-तुमिः—जहाँ तुक के कुछ चरनों में तो तुक  
मिलता हो किन्तु कुछ में न मिलता हो ।

२:— अर्धित-तुमिः—जिस तुक के अर्धित स्वर या अर्धित  
धरांत नामादि न मिलते हैं । या चर मिलते हैं या न  
मिलते हैं ।

३:— अथम-तुमिः—जिसमें तुक के अथम स्वर  
या नामादि न मिलते हैं । या चर मिलते हैं या न  
मिलते हैं ।

इन्के अर्धित निम्न मुख्य दोर तीन बिंदु का गवने हैं—

(१) अर्धितः—इसमें अर्धित नामादि धरा नामादि मर  
मिलते हैं ।

(२) अर्धितः—जहाँ अर्धित नामादि धरा नामादि मरों  
के मर में रहते हैं, और केवल कुछ मिलते हैं बिंदु हो अथम



काल्हि गई घृषभान घरें अरु हों तेरो वात चलाई ।  
सुर श्याम अषगुन जखि तेरे लौटत वाग्दून नाई ॥

श्याम... .." सुरदास "

गाइये गणपति जगवन्दन ।

गङ्गुर सुषन भवानी नन्दन ।

भेदक प्रिय मुद मङ्गलदाता ।

विद्या-न्यायिध बुद्धि-विधाता ।

मांगत तुलसीदास कर जोरे ।

बसहु राम-सिय मानस मेरे ॥

—“ तुलसी दास ”

इसी प्रकार मोरा बाई एष अन्य कृष्ण-भक्त कवियों के पद  
दाहरणार्थ देखे जा सकते हैं । इन्हीं को भजन भी कहते हैं ।

## गीत

इसमें चार पद, दो छन्दों से बनाये जाते हैं—जिनमें से दो  
द उल्लास या रोला के और दो पद दोहे के रहते हैं और अन्त में  
स माध्यायें टेक के रूप में रहती हैं : जैसे :—

सिद्धि धीयुत जाग लिखी गोकुल तैं प्यारे !

राम राम बंनने श्याम ! गोपाल ! मुरारे ॥

कृपा राधरी सों इवै सब विधि सब आनन्द ।

रहै ठारिका में सदा सकुशल हे वृजचन्द !

मनाये राधिका ॥

“ सरस ”

( चाँद के पञ्चाङ्क से )













२:—चतुष्पदी-छन्दः—इसके अन्तर्गत चौपाई, कवित्त, सर्वव्या, रंगीतिका इत्यादि छन्दों आती हैं।

३:—षष्ठ्य-छन्दः—इसमें छापय, कुरटलियादि आती हैं। इसी प्रकार अष्ट-पदी द्वादश-पदी आदि भेद भी छन्दों के लिये गये हैं।

यति:—जहाँ पर छन्द के पदों की गति विशेष नियमों से योजित हो कर ठहराई जाती है, वहाँ यति मानी गई है, अर्थात् गतियों के निर्दिष्ट या निश्चित गति के ठहराव ( गतिसंयम्य ) को यति कहते हैं। इसी के दूसरे नाम पिराम या विधाम भी हैं।

नोट:—पिराम एक प्रकार का चिन्ह भी होता है जिसे अंग्रेज़ों में कामा Commas कहते हैं। इसके मुख्य तीन भेद हैं, पद-पिराम, अर्ध-पिराम और पूर्ण-पिराम। इनके चिन्ह ये हैं:—

• • • या । ॥

यति या पिराम पर जितनी देर में एक पड़ा जा सकता है, उतनी ही देर तक ठहरना चाहिये।

गति:—छन्द को निर्धारित धारावाहिकता को गति कहते हैं। इसी गति पर छन्द को संगीतान्तरक मंगारंजकता और ध्वनि से सुखद माधुर्य निर्भर है।

नोट:—पदों की संख्यानुसार छन्दों के उक्त भेद जो हमने दिखाये हैं उनसे यह स्पष्ट होगा कि छन्दों में पदों या गतियों की संख्या सम रहती है; किन्तु इसके साथ यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि इनकी संख्या विषम भी होनी और हो सकती है, जैसे:—पद, या एक प्रकार के गाने योग्य भजन, यथा मुरदान्न और जितनी दास जी के पद तथा गीत, ईमे:—नन्द दाम् एत चमर त्रि को विषम छन्दों में। इनमें सङ्गित मन्दगती दादरा आदि के



कार के ( समान वर्ण या मात्रा वाले ) होते हैं इसीलिए इसे अर्थ-सम कहते हैं ।

३:— विषम:—वे छन्दों जो सम और अर्थ-सम न होकर पारों पारों में वैभिन्न्य या वैषम्य रखते हैं ।

निष्कर्ष रूप में यों कहा सकते हैं:—

सब पद सम में सम रहत, विषम विषम में जान ।

इन दोहुन तैं भिन्न जो, ताहि अर्थ-सम मान ॥

—रसाज-पिङ्गल

सम-छन्दों के सिर दो मुख्य भेद किये गये हैं:—

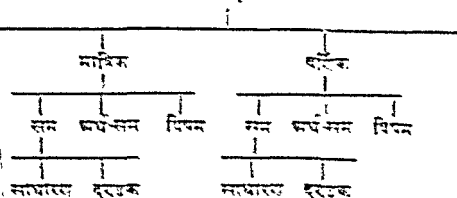
१:— दृष्टक

२:— साधारण

नोट—चूँकि दृष्टक और साधारण, मात्रिक और वलिक सम छन्दों में अपने पृथक् पृथक् रूप एवं मात्राओं और वर्णों की संख्या एवं उनसे विधान भिन्न भिन्न रखते हैं, इसलिये इनको स्थापक परिभाषाएँ हम नहीं दे रहे हैं । इनसे विशिष्ट लक्षण आगे देखिये ।

## छन्द-कोटक

छन्द





## मात्रिक-सम-छन्द-प्रकरण

नोटः—प्रस्तार रीत्यानुसार छन्दों की संख्या असंख्य हो सकती है, अस्तु हम यहाँ मात्रिक-समागतगत साधारण छन्दों के कुछ उदाहरण जो विशेषतया अन्यधिक रूप में प्रचलित पाये गये हैं दे रहे हैं:—

### १—चौपाई

२ १ १ २ १ २ १ १ २ २

ईश्वर अंश जीव अविनाशी । १६ मात्रायें

२ १ १ १ १ १ १ १ २ २

चेतन अमल सकल सुख राशी ॥ १६ मा

२ २ २ १ १ १ १ २ २

सो माया यग भयड गोसाई । १६ मात्रायें

१ १ १ २ १ २ १ २ २ २

बँधेड कीट मर्कट की नाई ॥ १६ मात्रायें

“ रामायण ”

चौपाई :—इस छन्द के प्रत्येक चरण में १६ मात्रायें होती

नोटः—इस छन्द की रचना में गति पर विशेष ध्यान चाहिए । इसके चरण के अन्त में ‘जगण्’ ( १ ५ १ ) या ‘त ( ५ ५ १ )’ कदापि न रखना चाहिए । यद्यपि ऐसा कोई नियम नहीं है परन्तु तो भी चरणान्त में दो गुरु ( ५ ५ ) रखने से छन्द की गति अच्छी हो जाती है और पढ़ने में भी मधुर पड़ती है । हिन्दी-साहित्य में तुलसीदास की चौपाइयाँ वर्य प्रसिद्ध हैं ।

## २—रोला

रोला :—इस मात्रिक-सम-छन्द में ११ और १३ मात्राओं पर विराम दे कर कुल २३ मात्रायें रखनी चाहिये, इसे काव्य छन्द भी कहते हैं। किसी किसी आचार्य का मत है कि इस छन्द के चरणान्त के दो गुरु पद होने चाहिये, किन्तु यह नियम सर्वत्र नहीं पाया जाता। जैसे :—

जाके प्रति पद माहि, कला चाबिस गनि राखें ।

रोला अथवा काव्य, छंद ताकह कयि भाखें ॥

नियम न लघु गुरु पेर, रखें अन्तें गुरु दोई ।

ग्यारह पर विधाम, किये प्रति उत्तम होई ॥

## ३—हरिणीतिका

हरिणीतिका :—इस छन्द में १६ और १८ के विराम से प्रत्येक चरण में २५ मात्रायें होती हैं, और चरणान्त में एक लघु और ६ गुरु का होना आवश्यक है। इसकी गति ठीक रखने के लिये प्रत्येक चरण की पाँचवीं, बारहवीं, उन्नीसवीं तथा छत्तीसवीं मात्रायें लघु रखनी चाहिये; नहीं तो छन्द की गति बिगड़ती है। किसी किसी के मत से इसमें ७ सात मात्राओं पर विराम देने रहना चाहिये और १४ चौदह मात्राओं पर दो मुख्य विराम दति के लिये रखना चाहिये। इस प्रकार केवल ४ धार 'हरिणीतिका' कहने या रखने से इस छंद का एक चरण आता है। जैसे—हरिणीतिका, हरिणीतिका, हरिणीतिका, हरिणीतिका ।

यथा :—

ये दारिका परिचारिका करि, राजकी कल्याणदी ।

अपराध क्षुब्धो बालि पठ्य, बहुत ही टांटी दई ।

पुनि भानुकुल भूपन सकल स्तन, मान विधि समधी किये ।

कहि जाग नहिं बिनती परस्पर, मैम

“तुलसी”

नोटः—इस छंद के तीसरे चरण में “स्तन” तक १६ पुरी होती है, और “मान” शब्द कट कर उसकी मात्रा गिनती अन्त वाली १२ मात्राओं में होती है, क्योंकि ‘स्तन’ ‘मान’ के बीच में विराम पड़ता है। ऐसा न होना चाहिये। (ऐसे ही दोष को व्यति-भङ्ग-दोष कहते हैं) ॥ किन्तु ज्ञान है कि कवि ने १४ चौदह मात्राओं पर विराम यहाँ रख कर छंद के उपनियम का अनुसरण किया है।

#### ४—तौमर

तौमरः—इस मात्रिक-सम-छन्द के प्रत्येक चरण में १२ पं होती है और अन्त में एक गुरु, और लघु-घण का होना चाह है यथाः—

तव चले वाण कराल । फुडूरत अनु बहु स्थल ।  
कोथी समर ओराम । चल विशिष निशित निकाम ।

#### ५—सार

सार — १६ और १२ के विराम से इस छन्द के प्रत्येक में २८ मात्राएँ होनी चाहियें। इसके चरणान्त में दो गुरु होना आवश्यक है। यथाः—

मान समय उठि जनक-नन्दिनी, विभुवन नाथ जग  
उठा नाथ ! अथ मोर भयो है, भूपति द्वार सुलाय ॥

\* कर्तों के दोषों वला : — व्यति-भङ्ग, व्यति-भङ्ग, छन्द-भङ्ग और इत्यादि दोषों का विस्तृत वर्णन हम करने देंगे ।

कमल-नयन-मुख निरखि राम को, ध्यानैद-सिंधु समाधि ।  
कनक-कलस सरजू जल भारी, विघ्न दान करावै ॥

नोट:—देखिये उक्त 'हरिगीतिका' में भी २८ मात्राये होती हैं, और इसमें भी उतनी ही मात्राये हैं, किन्तु उनकी व्यवस्था में भेद होने से छंद की गति पूर्णतया बदल गई है और उसका दूसरा ही रूप हो गया है ।

### ६—कुण्डल

कुण्डल:—१२ और १० के विराम से इस छन्द के प्रत्येक चरण में २२ मात्राये होनी चाहिये । इसके चरणान्त में दो गुरु-धर्मा का होना अवश्य है । यथा:—

मेरे मन राम नाम, दूसरा न कोई ।  
सन्तन दिग बैठि बैठि, लोक लाज खोई ॥  
अब तो बात फैल गई, जानत सब कोई ।  
अंसुवन जल सींचि सींचि, प्रेम बेलि बोई ॥

नोट:—प्रभाती कुण्डल का यह रूप है जिसके अन्त में एक ही गुरु होता है, इसे उड़ियान भी कहते हैं । यथा:—

द्युकि चलत रामचन्द्र, बाजत पैत्रनियों ।  
धाय मातु गोद लेत, दशरथ की रनियां ॥

### ७—रूप-माला

रूपमाला:—इस छन्द के प्रत्येक चरण में २४ मात्राये होनी चाहिए, एवं १४ और १० मात्राओं पर विराम देना और अन्त में एक गुरु और एक लघु-धर्मा का रखना आवश्यक है । यथा:—

यज्ञ-भण्डल में हुते, रघुनाथ जू तेहि काल ।  
चर्म अङ्ग कुरङ्ग को, शुभ स्वर्ण की सँग बाल ॥



२:—राम ही की भक्ति में, अपनी भलाई जानिये ।

१०—चवर्पया

चवर्पया:—प्रत्येक चरण में १०, ८ व १२ के विराम से ३० मात्राएँ होनी चाहियें, अन्त में एक सगर और एक गुरु का होना आवश्यक है—यथा:—

मे प्रगट हृपाला, दीन दयाला,  
कौशल्या-हितकारी ।

हर्षित महतारी मुनि मन हारी,  
अद्भुत रूप निहारी ॥

लोचन अनिरामा, तनुघनश्यामा,  
निज आयुध भुज चारी ।

भूपन वनमाला, नयन विमाला,  
शोभासिंधु खरारी ॥

नोट:—मात्रिक समान्तर्गत दण्डक छन्द भी होते हैं, परन्तु वे अधिक प्रचलित नहीं हैं, अतः उनके उदाहरण हम यहाँ पर नहीं दे रहे हैं ।

## मात्रिक अर्ध-स्तम-छन्दों का प्रकरण

जित मात्रिक छन्द के प्रधान चरण की मात्राएँ तीसरे चरण की मात्राओं के और दूसरे चरण की मात्राएँ चौथे चरण की मात्राओं के बराबर हों उसे मात्रिक-अर्ध-स्तम-छन्द कहते हैं । इस प्रकार के छन्द बहुधा दो ही पंक्तियों में लिखे जाते हैं अर्थात् पहिला और दूसरा चरण एक पंक्ति में और तीसरा तथा चौथा चरण दूसरी पंक्ति में लिखते हैं । यहाँ हम कुछ अति प्रसिद्ध मात्रिक-अर्ध-स्तम-छन्दों के ही उदाहरण दे रहे हैं:—



यः—छर्मा हलाहल मद भरे, श्वेत-श्याम-रत्नार ।  
जिह्व, मरुत, मुक्ति मुक्ति परत, जेहि निवपत पक धार ॥

### ३—सौरठा

सौरठा :—इसके पहिले और तीसरे चरण में ११ और दूसरे तथा चौथे चरण में १३ मात्राएँ होती हैं । अर्थात् दोहा के चरणों : विपरीत इसके चरण होते हैं । यथा :—

जिहि मुनिगत तिथि होय, गगनादक करियर धदन ।

करहु अनुग्रह मोय, बुझि रागि गुन गुन मदन ॥

### ४—उह्लाता

उह्लाता :—पहिले और तीसरे चरण में और दूसरे तथा चौथे चरण में १३ मात्राएँ होती हैं । जैसे :—

हे गरुड दाहिनी देवि ! तू, करती सब का प्राल है ।

हे मातृ भूमि ! संतान हम, तू, जननी, तू प्राण है ॥

त्रिपुरारि विजोवन दिग यन्त्र, विष भोजन भय भय हरण ।

कह तुलसिदास सेवक मुलम, जिय जिय जिय गङ्गुर गरुड ॥

( द्वितीय )

नोट :—यद्यपि इस छन्द में २८ मात्राएँ भी मानते हैं तथापि प्रायः कवि इतने २६ मात्राएँ भी रखते हैं और इतने १३, १३ मात्राओं पर यति ( विराम ) देते हैं । दोनों नियम ठीक हैं, किन्तु हमारी सम्मति में २८ मात्रा वाला उह्लाता-छन्द अधिक सरल-सुन्दर और मनोहर होता है ।

### ५—गविरा

गविरा :—इसके विषम-चरणों में १६ और सम चरणों में १४ मात्राएँ होती हैं और छन्द में दो गुरु-शब्द होते हैं । जैसे :—



हरिहर भगवत सुन्दर स्यामी, सब के घट की मेरी  
मेरे मन की कीजे पुरी, इतनी हरि मेरी

## मात्रिक-विषम-छन्दों का प्रकरण

जो छन्द मात्रिक-सम या मात्रिक-अर्ध-सम व है  
मात्रिक-विषम-छन्द है, अर्थात् मात्रिक-विषम-छन्द उन्हे  
जिसके चारो चरणों की मात्रा-व्यवस्था अथवा नियम भिन्न  
हैं या जिसके सम सम और विषम विषम चरण न हों  
अथवा सम सम मिलते हों, परन्तु विषम विषम न हों  
तथाच इसी के प्रतिकूल विषम-विषम मिलते हों। और सम  
मिलते हों।

नोटः—चार चरणों से कम तथा चार चरणों से  
चरण जिन छन्दों में पाये जायें उन्हें विषम छन्द जानना।  
ऐसे छन्दों में जो बहुत प्रचलित हैं उन्हें ही हम दे रहे हैं।

### १—कुण्डलिया

कुण्डलियाः—आदि में एक दोहा, उसके पश्चात् एक  
छन्द जोड़कर ६ पदों ( चरणों ) का यह छन्द बनाना चाहिए  
का अन्तिम-चरण, रेखा का प्रथम चरणार्द्ध होना है, और  
के अन्तिम चरण के कुछ अन्तिम-अक्षर या गन्द वही होने  
जो दोहे के आदि में हैं, और रेखा के अन्तिम चरण में  
मात्राएँ रहे। जैसेः—

आली घन घरती हरी, ताहि न लीजे सङ्ग ।

जो मँग राखे ही बने, नौ करि राखु अपङ्ग  
नौ करि राखु अपङ्ग, फेरि फरक मो न कीज ।

कपट रूप दिखराइ, ताहि को मन हर लीज

कह 'गिरधर कविराय, ' सुटक जैहँ नहिँ ताकी ।

कोटि दिलाता, देहु, हरो घन धरती डाकी ॥

## २—छप्पय

छप्पय—इस छन्द की आदि में रोला के चार पद चौबीस  
गीत मात्राओं वाले रखकर तदुपरान्त उह्वाला के दो पद और  
ना चाहिये ।

नोट—छप्पय में जो उह्वाला-छन्द रक्खा जाय उसके दूसरे  
चौथे चरण के अन्त में यदि 'नगर' (।।।) रक्खा  
जाय तो छन्द की गति अधिक रोचक बन पड़ती है ।

यथा :—

अ—रोला को घेरि प्रथम बहुरि उह्वाला राखैं ।

ताको छप्पय-छन्द नाम सबहो कवि भाखैं ॥

लघु गुरु नियम न कोइ, कहैं कविराई कोइ ।

कोई रोला-अन्त माहि, राखैं गुरु दोइ ॥

उह्वाला के विषय मैं, कोई कवि पेसो कहैंहि ।

दूहे चौथे चरण में अन्त बरख, अथ लघु रहहिं ॥

क—नीख निखिल नितर्ग, नीब तन तोन तने ये ।

निबिड़ निर्गथ नितान्त, नेत्र निस्तार बने ये ॥

काला काला सवन सवन धा गगन गरजता ।

प्रखर प्रमंजन पूर्ण, बाहिर्गनकार्य बरजता ॥

अविरत होती कृति धी, सृष्टि कृष्टि आती न धी ।

भूरि भवानकता भरी, भूनि भजो भाती न धी ॥

x

x

x

तरनि तनूजा टट तनाल तरवर बहु क्षये ।

लुके लुल लौ जल पर तन दिन मनहु लुहाये ॥



सब में करि नेह भजा रघुनन्दन राजन हाँस्क माल दिये ।  
नव नील बधू कल पीत भँगा भलकै अलकै घुँघरारि लिये ॥  
अरविन्द समान सुरूप मरन्द अनन्दित लोचन भृङ्ग पिये ।  
दिय में न बस्यो अस दुर्मिल बालक तौ जग में फल कौन जिये ॥

नोटः—सर्पया छन्दों के और भी कई भेद हैं; यथाः—

आठ भगण की किरौट, तथा आठ मगण और एक गुरु की  
सुन्दरी (द्वितीय) होती है। इनके अतिरिक्त सात भगण और अन्न  
में गुरु और लघु की 'चकोर', सात जगण और अन्न में लघु और  
गुरु की 'सुमुखी', सात जगण और अन्न में यगण की 'धाम',  
आठ मगण और एक लघु की "अरविन्द", आठ जगण और एक  
लघु की 'लपंगलता', आठ भगण की 'सुख' और आठ जगण  
की 'मुक्तहरा' सर्पया छंद और भी होती हैं।

### वर्णिक समान्तर्गत दशदक-प्रकरण

जिस पद्य के प्रत्येक चरण में वर्ण संख्या २६ ने अधिक हो  
उसे दशदक वृत्ति कहते हैं। इसके भी दो भेद हैं (१) गण-बड (२)  
मुक्तक।

गण-बड-दशदकः—यह है जिसके वर्णों की संख्या गणों के  
अनुसार नियमित हो।

मुक्तकः—यह दशदक है जिसमें वर्णों की संख्या तो नियत  
हो, किन्तु गणों का बन्धन न हो। ऐसे मुक्तकों में ने हिन्दी में  
"मनहरण" बहुत प्रचलित है। इसी को घनाक्षरी या कवित्त भी  
कहते हैं।

नोटः—वर्णिक वृत्तियों में जो छंद अक्षरों की गिनती या "कहाँ  
कहाँ गुरु लघु के नियम" से बनाये जाते हैं वे भी मुक्तक छंद-  
जाते हैं।

स० दि०—४







यदि कोई संख्या न घट सकती हो तो उसे छोड़कर उसकी पूर्व-  
वर्ती अन्य संख्या लो। घटाने के पश्चात् शेष रही संख्या में ही  
पूर्ववर्ती संख्या घटाना चाहिए। जब घटाते घटाते शून्य बचे तब  
इस क्रिया को बन्द कर देना चाहिये और यह देखना चाहिए कि  
कौन कौन से अङ्क घटे हैं। यह ज्ञान होने पर उन्हीं अङ्कों के ऊपर  
प्रथम पंक्ति में (सब लघु बिन्दु वाले प्रस्तार के अन्तिम रूप में)  
लघु-बिन्दुओं को उनके दक्षिण भाग वाले लघु बिन्दुओं से जोड़ कर  
गुरु बिन्दु बना लो और शेष बिन्दु ज्यों के त्यों ही उतार लो,  
बस यही उत्तर का अर्माष्ट रूप होगा।

प्र०:—७ मात्राओं के प्रस्तार में १३वाँ रूप क्या है ?

उत्तर:—      1 1 1 1 1 1 1      (प्रस्तार का अन्तिम रूप)

१, २, ३, ४, ८, १३, २१      (७ मात्राओं की सूची)

प्रश्न में १३ वाँ रूप माँगा गया है, अतः उसे (१३ को) २१ में घटाया  
(२१—१३==) आठ बचा। इस आठ में से २१ के पूर्ववर्ती  
१३ को घटाते हैं तो वह नहीं घटता, इसलिए उसे छोड़ कर उसके  
पूर्ववर्ती दूसरे अङ्क (१३) को लेकर फिर उसी प्रकार घटाते हैं तो  
शून्य बचता है। बस यहीं पर यह क्रिया समाप्त होनी है और हम  
देखने हैं कि घटाने वाला अङ्क = है इसलिए उक्त दो पंक्तियों में  
सूची में प्राप्त प्रस्तार-संख्या-सूचक दूसरी पंक्ति के = के अङ्क के  
ऊपर वाले लघु बिन्दु को उसके दाहिनी ओर के लघु बिन्दु से  
मिलाकर एक दीर्घ बिन्दु बनाया और शेष बिन्दु ज्यों के त्यों  
र लिए, तो अर्माष्ट रूप इस प्रकार मिला:—

1 1 1 1 1 1 1

१, २, ३, ४, ८, १३, २१

1 1 1 1 5 1





जैसे प्रकार उक्त रीत्यानुसार ७ वर्णों के प्रस्तार का ४ पौ रूप यह हुआ—

५२१५

नोटः—प्रस्तार के वर्णों का तुलनात्मक दृष्टि से देखने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रत्येक प्रस्तार में, यह कितने ही वर्णों का योग हो, उसके विपरीत रूप पाएने आदि के भावों में समानता रखते हैं। वैसे न्याय वर्ण वाले प्रस्तार के ३, ४, ७, ६ और ११ के प्रारंभ रूप। इसी प्रकार सम संख्याओं के रूपों में भी जानना चाहिये।

यह ध्यान में रखने की बात है कि धर्मिक-प्रस्तार के सभी रूपों में वर्णों की संख्या समान हो सकती, किन्तु माथिक-प्रस्तार में सर्वत्र एवं सर्वत्र ऐसा न होगा। उसमें केवल प्रस्तार के अन्तिम रूप में ही जहाँ सभी वर्ण लक्ष्य रहेंगे, माथी की नियत संख्या में ही वर्ण मिलेंगे।

## उद्दिष्ट

निम्न वर्णों के प्रस्तार में दिया हुआ रूप कौन स्थान रखता है। यह बतलाना ही उद्दिष्ट का रूप देना है। अर्थात् प्रस्तार का रूप क्या है दिया गया और यह पृष्टा गया कि यह कितने वर्णों के प्रस्तार का कौन सा रूप है—इस प्रश्न का उत्तर देना ही उद्दिष्ट कहा जाता है।

उद्दिष्ट की रीतिः—दिये हुए रूप को निरूपकर उसके प्रत्येक वर्ण के नीचे (शुद्ध और लघु प्रत्येक चिह्न के तले) एक से एक कर के द्विगुण-अक्ष निरूपित जायें, इस प्रकार लिख जाने लघु चिह्नों के नीचे वाले अक्षों को जोड़कर योग में एक और दे दें। इस प्रकार प्राप्त हुई संख्या अभीष्ट संख्या होगी।



प्रकार पाँच-वर्णों के प्रस्तार में ३२ भेद, ६ वर्णों में ६४, ३ वर्णों में १२८ इत्यादि होंगे।

अस्तार के भेदों की संख्या जानने के लिए यह नियम  
दिया और सरल होता है:—

तने षण्ठी के प्रसार के भेद जानने हों, दो के (२) उतने करो, इस प्रकार प्राप्त हुई संख्या ही अभीष्ट संख्या होगी।

घणों के प्रस्तार में तट्टिद-संख्यायः—२ के ४ घात  
 $2^4 = 2 \times 2 \times 2 \times 2 = 2 \times 2 = 32$

तो प्रकार ६ वर्णों के प्रस्तार-भेदार्थ—

$$2^6 = 2 \times 2 \times 2 \times 2 \times 2 \times 2 = 64$$

## मात्रा-उद्दिष्ट

मात्रा-उद्दिष्ट की रीति यह है कि दिये हुए मात्रा-प्रस्तार के  
घरावर समस्त संख्या वाले अक्षर इस प्रकार लिखे कि  
चिन्हा के केवल ऊपर और गुण चिन्हा के ऊपर और नीचे  
और अक्षर रहें। तदुपरान्त गुण चिन्हा के ऊपर वाले अक्षर  
मात्र कर अन्तिमाक्षर में घटाया, जो अक्षर शेष रहेगा यदि  
अक्षर होगा—जैसे :—यह जानने के लिए कि १५ ५ १  
रूप मात्रा-प्रस्तार का ध्यान मा भेद ही पहिले इसे भी  
लेख लो, फिर १ में प्रारम्भ कर, धीरे धीरे अक्षर जोड़ते हुए  
य समस्त अक्षर लिखो, तबसे प्रस्तार की सामान्य संख्या  
न होगी। फिर उन्हीं अक्षरों में से कुछ जो लो, धीरे धीरे  
के ऊपर और नीचे दोनों ओर अक्षर लिखो। फिर गुण  
के ऊपर के अक्षर के अन्तिम में जोड़ो, फिर गुण



ऊपर के चित्रसे स्पष्ट है कि चक्र के बायें और दाहिने ओर के ड, ल, ल, और ड, और ओ, फ, त, और ठ नामक कोष्ठकों में नव से ऊपर के अ और इ कोष्ठकों के समान १ ही १ के अङ्क लिखे गये हैं। फिर नियमानुसार द्वितीय पंक्ति के ए कोष्ठक में उसके ऊपर के अ और इ कोष्ठकों के अङ्कों का योग-फल जो  $१ + १ = २$  होता है रखा गया है। इसी प्रकार तृती पंक्ति के द और य नामी कोष्ठों में उनके ऊपर के ड और ए कोष्ठकों के अङ्कों का योग-फल जो सं० (३) होता है दिया गया है और इसी प्रकार उक्त रोचानुकूल दिया प्रागे भी की गई है।

इसी प्रकार किसी भी संख्या का मेर घन सकता है। उदाहरण के लिए हम ६ षट्ठों का मेर और दे रहे हैं।

१		१				
१	२	१				
१	३	३	१			
१	४	६	४	१		
१	५	१०	१०	५	१	
१	६	१५	२०	१५	६	१

एक दोनो मेर चक्रों का मिलान करने से यह स्पष्ट हो जायगा कि ६ षट्ठों के मेर में ऊपर की ५ पंक्तियाँ ५ षट्ठों के मेर की पंक्तियों के समान ही हैं, इससे यह ज्ञान होता है कि न्यूनार्थिक षट्ठों के षट्ठों की भाँति, जिनमें बाईं ओर से मेर समान होते हैं वे भी ऊपर की पंक्तियाँ समान रहती हैं।

नोट—ध्यान रखना चाहिए कि बड़ी संख्या के मेर में उन्मने न्यून संख्या के सभी मेर सम्मिलित रहते हैं—जैसे यहाँ ६ षट्ठों के मेर में १, ४, ३ आदि षट्ठों के मेर ऊपर की पंक्तियों में सम्मिलित हैं।

इन पंक्तियों में जो अक्षर लिखे गये हैं उनमें यह ज्ञात है कि उतने वर्णों के प्रस्तार में इतने भेद होते हैं, और चतुर्गुरु, त्रिगुरु, द्विगुरु और एक गुरु एवं सय लघु वर्ण वाले कितने होते हैं। जैसे :—ऊपर के २ वर्णों के मेष में मयमे या नीचे वाली पंक्ति के अक्षरों को जोड़ने से प्रस्तार के संख्या जो ३२ है ज्ञात होती है। तथा यह भी ज्ञात होता है। भेदों में से एक भेद में पंचिा गुरु और एक में पंचिा लघु वर्ण हैं (वाले कोष्ठों में यही ज्ञात होता है) और दूसरे कोष्ठ चार गुरु और एक लघु वाले २ भेद होते हैं फिर ३२ कोष्ठ के सार १० भेदों में ३ गुरु और २ लघु वाले भेद होते हैं। ४ वे के अनुसार २ गुरु और ३ लघु वाले १० भेद होते हैं। ५ वे अनुसार ४ भेद ऐसे होते हैं जिनमें से प्रत्येक में एक गुरु और लघु होते हैं।

नोटः—मेष में चार और से ही सदा चलना चाहिये और नीचे की पंक्ति में चार और के मय से प्रथम कोष्ठ में १ का अक्षर रहेगा, प्रस्तार के उम भेद का सूचक समझना जिनमें सभी वर्ण जिनकी निश्चित संख्या का प्रस्तार भेद जा रहा है, गुरु होंगे।

अब उम कोष्ठक में दाहिनी ओर चला और गुरु वर्णों संख्या में एक २ की कमी और लघु वर्णों की संख्या में एक की वृद्धि करने जायेंगे, यही तक कि पंक्ति के दाहिनी ओर मय से अंतिम कोष्ठक को जिनमें १ का अक्षर रहेगा उम भेद सूचक समझें जिनमें सभी वर्ण लघु रहेंगे।

कितने ही वर्णों के प्रस्तार में किसी निश्चित संख्या में वाले गुरु और लघु वर्णों की संख्या जानने के लिए बिना एक बनाये ही निम्न नियम का काम में जाना चाहिए। नियमः—

जिनने वर्णों के मेष को पंक्ति बनानो हो, उतनी ही संख्या तक दोनों ओर से प्रारम्भ करके १ से प्रारम्भ कर गिनती लिख जाओ। वर्णों की निश्चित संख्या तक पहुँचने के पश्चात् सव से बाई १ और लिखो। इस प्रकार प्रस्तार के निश्चित वर्णों को या से तुम्हारी पंक्ति की संख्या १ एक अधिक होगी। अब १ पंक्ति के नीचे बाई ओर से प्रारम्भ करके (ऊपर की पंक्ति के सव से बाई ओर के नीचे कुछ न लिखकर) फिर वही वर्ण १ से लेकर निश्चित वर्णों की संख्या तक उल्टे ढंग से लिख दो। यथा:—

(६) छ वर्णों के प्रस्तार की पंक्ति

१ ४ ४ ३ २ १

१ २ ३ ४ ५ ६

निम्ने घननर प्रथम-पंक्ति के सव से बाई ओर के १ को अपनी १ पंक्ति में (तीसरी) वर्णों का वर्ण ही उतार लो और फिर इस १ को प्रथम-पंक्ति के दूसरे अक्षर से गुणा करो और गुणन फल में १ दूसरे अक्षर के नीचे वाले अक्षर का भाग दो। लब्धि में बाये अक्षर से अपनी तीसरी पंक्ति का दूसरा अक्षर समझे। अब जो इस तीसरी पंक्ति के दूसरे अक्षर को (जो अपनी प्रथम पंक्ति के तीसरे अक्षर से गुणा करो, और गुणनफल में ३ तीसरे अक्षर के नीचे वाले अक्षर का भाग दो। लब्धि में बाये अक्षर से अपनी तीसरी पंक्ति का दूसरा अक्षर होगा। इस प्रकार एक किश करती जाओ जब तक तुम्हारी तीसरी पंक्ति का १ से दसवीं ओर का अन्तिमाक्षर एक १ न आ जाये। इस प्रकार की पंक्ति तैयार होगी मेष की वही प्रथम पंक्ति होगी।





ध्यान रहे कि घाई और के कोणक सब एक सोध में ही रहें । केवल दाहिनी और एक एक कोणक को कमी के कारण एक प्रकार का सौपान या सीढ़ी सी बने, फिर अङ्क भरने वाली समस्त क्रिया उसी प्रकार करो जिस प्रकार वर्णों के साधारण मेरु में की जाती है ।

### खण्ड-मेरु

वर्णों की निश्चिन संख्या से एक अधिक काणक वाली आड़ी पंक्ति बनाओ और उसके नीचे एक काणक कम वाली पंक्तियाँ खण्ड-मेरु के समान बनाते चले जाओ, यही तक कि सब से नीचे एक कोणक ही रहल्यो । ध्यान रहे कि घाई और के सभी कोणक एक सीधी रेखा में रहें, केवल दाहिनी और एक एक कोणकों के कमी से एक, सीढ़ी सी बने और तुम्हारा चित्र एकावली मेरु के बराबर में उलटा रहे ।

अब सब से ऊपर की पंक्ति के प्रत्येक कोण में १ का अंक खो और घाई और की खड़ी पंक्ति में २, ३ आदि सीधी गती के अंक अनन्तम कोणक तक लिख जाओ । यथा :—

### ६ वर्णों का खंड मेरु

१	१	१	१	१	१
२	३	४	५	६	
३	६	१०	१५		
४	१०	२०			
५	१५				
६					

अब वाली कोणकों में अङ्क इस प्रकार भरो, कि प्रत्येक कोणक के नैऋत्य अर्थात् उत्तर-पूर्वीय दिशा वाले अथवा यदि अपने कोण



घट्ट के दूसरे मैदान कोण वाले कोष्ठक के घट्ट में जोड़कर रखें। इनके साथ यह भी करना चाहिए कि प्रत्येक दूसरी पंक्ति के बाईं ओर वाले कोष्ठक के कोष्ठक में दो, तीन, चार, पाँच आदि के अंक लिखें। जहाँ पर किसी कोष्ठक के मैदान कोण वाले कोष्ठक के बाईं दो कोष्ठक हैं वहाँ दाहिने कोष्ठक में ही काम लेना चाहिये : यथा—

1
1   1
2   1
1   2   1
3   2   1
1   3   3   1
4   6   4   1
1   6   15   6   1
5   10   10   4   1
1   10   35   10   1
6   20   20   10   1

नोट—

दाहिनी ओर के अन्त वाले सभी ओर के कोष्ठकों में 1 के घट्ट लिखें, और प्रत्येक दूसरी पंक्ति के बाईं ओर वाले अन्त कोष्ठकों में यथा क्रम १, २, ३, ४, आदि की गिनती के अंक लिखें।

### एकावली-मात्रा-मैत्र

एकावली-मात्रा-मैत्र का चित्र दीर्घ होता है बनाओ ईसा १५५०-१५५१ ईसा का बनाया जाता है, केवल इतनी ही विरोधाभासों कि सब से ऊपर एक कोष्ठक रखें और नीचे के कोष्ठकों की सभी पंक्तियों को दो भागों में विभक्त करें। अर्थात् प्रत्येक पंक्ति की दो दो पंक्तियाँ बना लें। बाईं ओर के







संख्या में वृद्धि और लघु मात्राओं की संख्या में न्यूनता करनी चाहिए।

### खण्ड-मात्रा-मेरु

खण्ड मेरु का चित्र पकावली-मेरु के चित्र से ठीक उलटा घनाओ और सब से नीचे दो कोष्टक देकर सब पंक्तियों के दाहिनी ओर दो दो कोष्टकों की कमी रखो। सबसे अन्त में एक कोष्टक भी रखा जा सकता है। बाई ओर के कोष्टक एक सीधी रेखा में हो रहने चाहिए। अब इसमें अङ्क इस प्रकार भरो कि सब से ऊपरी और बाई ओर की पंक्ति के सभी कोष्टकों में १ के अङ्क हों, फिर खाली कोष्टकों में एक कोष्टक और उसके नैऋत्य कोण वाले कोष्टक के अङ्क को जोड़ कर नैऋत्य के पूर्व वाले कोष्टक में रखो। अब दाहिनी ओर के सब से अन्तिम कोष्टकों के अङ्क ही प्रस्तार के अनुरूप अङ्क होंगे। खण्ड-मेरु से भी वही काम निकलता है जो पकावली मेरु और मेरु से निकलता है।

### पताका

जैसा कि हम प्रथम कह चुके हैं, मेरु-चक्र से किसी संख्या वाले वर्ण-प्रस्तार में इतनी संख्या में द्विगुण, त्रिगुण एवं चतुर्गुण के रूप होते हैं, केवल यही ज्ञात होता है; किन्तु पताका-चक्र की सहायता से यह भी ज्ञात होता है कि प्रस्तार की धेरों में ऐसे रूप प्रथम, द्वितीय तृतीय आदि किस स्थान में स्थिति हैं। इसके बनाने की विधि यह है कि जितने धेरों की पताका बनानी हों, उतने वर्ण वाले मेरु-चक्र की पंक्ति लिखो। उसके नीचे कोष्टकों की दूसरी पंक्ति बना कर उनमें बाई ओर से प्रारम्भ कर एक (१) और उससे दूनी गिनती लिखते चले जाओ। अब प्रथम पंक्ति के जिस जिस कोष्टक में जितने जितने अङ्क हैं उसके नीचे उतने



ही कोष्टक बनाओ । अथ इन कोष्टकों में अक्षरों को भरों कि—द्वितीय आड़ी पंक्ति के प्रथम एवं द्वितीय कोष्टक के अक्षरों को जोड़ कर कोष्टकों की द्वितीय खड़ी पंक्ति के तृतीय कोष्टक में रखलो । तत्पश्चात् इस जोड़ में प्राप्त हुए अक्षरों को तथा द्वितीय आड़ी पंक्ति के आगे वाले कोष्टकों के अक्षरों में जोड़ कर नवौं के कोष्ट में रखलो और यही क्रिया आवश्यकतानुसार करते जाओ ।

व्यापक-नियमः—

अ	१	१	१०	१०	१	१
इ	१	२	४	८	१३	३२
उ	३	६	१२	२४		
ए	५	७	१४	२८		
ऐ	६	१०	१५	३०		
ओ	१७	११	२०	३१		
	१३	२२				
	१८	२३				
	१६	२६				
	२१	२७				
	२५	२६				

जो अक्षर जोड़ने में प्राप्त हो उसे स में जोड़ा और प्राप्त अक्षरों को द से जोड़ा फिर ए से जोड़ा इसी प्रकार करते जाओ जब तक कि सभी कोष्टक पूर्ण न हो जायें । एक खड़ी पंक्ति के पूरी हो जाने पर दूसरी खड़ी पंक्ति को और उसके कोष्टक भरें, किन्तु स्मरण रखें कि जो अक्षर पहिले एक बार कहीं आ चुका है वही अक्षर यदि पुनः प्राप्त हो तो उसे न रखें बल्कि उसके

अने बालों गिलों का अङ्क लिखे और अब कमी देता हो  
तनी होइने का अङ्क व पंक्ति को आदि अथवा स कोट से प्रारम्भ  
होइये। यद्य उक्त विषय में तीसरी पंक्ति के य से ४ वे कोटक में  
२ का अङ्क मान होकर लिखा जाना चाहिये या किन्तु यह अङ्क  
द्वितीय पंक्ति के चौथे कोटक में आ चुका है। अतः इसके आगे  
बस अङ्क १० वहाँ लिखा गया है और तत्पश्चात् पाँचवें कोटक  
में शिर व पंक्ति को आदि से प्रारम्भ की गई है और  $१० + १$   
(स) = ११ लिखा गया है और शिर ४ वे कोटक में १७ का  
अङ्क हो पहिले आ चुका है नहीं लिखा गया। वरन् उसके आगे  
४ अङ्क निम्नानुसार १ = उसके स्थान पर दिया गया है, और  
उसके नीचे दिया शिर व पंक्ति के स कोटक से प्रारम्भ हुई है और  
 $१० + १ = ११$  को संख्या दी गई है। इसी प्रकार और सभी  
कोटकों के विषय में भी जानना चाहिये।

नोट—यह सब के देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि  
पंच बालों के प्रसार में जितनी बालें १० रूप, चौथे, ६, ७, १०,  
११ वे इत्यादि स्थानों के हैं। अब यह को सहायता से इनके  
संख्यांक क्र. १११५५, ११५१५, १५११५ सरलता से  
जाने जा सकते हैं।

### मात्रा-भवाका

इसका भी वही उपयोग है जो वर्ण-पदाका का है और इसके  
बारे की विधि यों है कि जितने मात्राओं को पदाका बनानी हो  
उन्हीं मात्राओं के अक्षरों की पंक्ति लिख लें, फिर उनके नीचे  
सब कोटक बनाओ। प्रथम पृथक् स्थान पर प्रसार की समस्त  
संख्या को सूचित करने वाले अङ्क जिन्हें सूची कहते हैं (१, २, ३,  
४, ५) लिखें। आठवीं पंक्ति में सब से दाहिनी ओर १ का अङ्क



## साक्षात्-पताका की दूसरी गति

समस्त श्रुती में कही गई १, २, ३, ४, ५ पंक्ति के छद्म हैं उन्हें लेते में हस्त की विविध धारा फिर समस्त भेद के छद्मों को विवेचन-क्रम में लिखा । श्रुती के छद्मों के विवेचन में यह ध्यान रहे कि दो दो श्रुती के बीच में एक एक कोष्ठक खाली पड़ा रहे । व्यापक-समस्त इन छद्मों के धारों कोष्ठकों के धारों दूसरे कोष्ठक जोड़ दो । इस श्रुति पंक्ति के २१ में से व. १, २ इत्यादि को पढ़ा कर दूसरे कोष्ठक भेज । इसी प्रकार चौदवीं पंक्ति के छद्म (८) में से ३, २, १ के क्रम पढ़ा जाए वैसे रूप छद्म भेजा, इसी प्रकार तृतीय पंक्ति के छद्म (८) के चौदहवीं धारा धारों १३, १६, १७ इत्यादि छद्मों में से ३, २, १ पढ़ा कर छद्म भेजा, इसी प्रकार प्रथम से चतुर्थ की पूर्ति करो । नोट यह ध्यान रखना कि किसी छद्म की पुनर्गति न होने पावे छद्म धारों धारों छद्म सर्वथा खाली है ।

नोट—समस्त-पताका की पताका में त्रिज्या पंक्ति के छद्म १ के पढ़ा ही प्रथम पंक्ति का १ पड़ेगा । ध्यान—  
विषय दूसरे पृष्ठ पर देखो ।





## माया-मकंदी

चित्र नं० २

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११
१ कला	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
२ नोर	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
३ मय कला	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
४ गुन	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९
५ लय	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
६ वर्ग	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
७ विषय	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९

इसी प्रकार अन्य मंडला की मायाया की भी मकंदी चित्र बना सक

## परिशिष्ट

हम प्रयत्न हो यह कह चुके हैं कि इन्हीं में कनों कनों दीर्घ वर्ण या स्वर को ह्रस्व तथा कनों कितनी ह्रस्व-स्व वर्ण को दीर्घ को नाति अथवा कनों कितनी वर्ण को दीर्घ ह्रस्व दोनों के मध्यस्थ स्वर से उच्चारण करने का संयोग है, तथा भाषा-गणना आदि में इस वैकल्पिक-पाठ-स्वातंत्र्य कारण भाषा अन्तर भी पड़ जाता है। हमारे आचार्यों ने इस विषय पर कुछ विगोचर ध्यान नहीं दिया और कदाचिद् इनकी विवेचना एवं व्याख्या इत्यादि नहीं की क्योंकि भाषा की वर्ण-माला में ऐसे स्वर नहीं हैं जिनका उच्चारण दीर्घ एवं ह्रस्व को मध्यगत-ध्वनि के साथ होता है। कदाचिद् इनका कारण सेकवियों एवं इन्द्र-गोत्र के आचार्यों ने ऐसे स्वरों के कुछ पाठ को पाठकों के हाथों ऊपर दौड़ा रक्खा है।

चूंकि हमारे भाषा-विज्ञान में प्रयत्न कोई भी कार्य वैज्ञानिक रूप में नहीं हुआ और वर्ण-माला में नवीन परिवर्तनों का देखते हुए उनके अनुसार पुनरुद्धार एवं सुधार नहीं किया गया, यही कारण है कि यह विषय अनालोचनित हो पड़ा रहा।

हिन्दी की वर्ण-माला अधिकांश में वही है जो संस्कृत की है, वह बात अवश्य है कि संस्कृत की वर्ण-माला के कति-कति ऐसे हैं जिनका प्रयोग हिन्दी के ठीक जन्मों के रूपों में कनों में होता है। हां, संस्कृत के तन्मय या कुछ जन्मों में मयं हो-प्रयोग होता है, किन्तु तन्मय या अपर्याप्त रूपों में कनों के कारण सरल किबे गये। (कदाचित् इस-प्रकार के कनों के कारण सरल किबे गये) एवं उनका प्रयोग न होकर उनके





लिए भाषा की वर्ण-माला के कतिपय वर्णों में नये सुधार एवं संस्कार किये गये हैं, तथा अभी और नये सुधारों की आवश्यकता रहते हैं। इन नये सुधारों में से एक सुधार अथवा आविष्कार कुछ हल्के एवं दीर्घ स्वरों के मध्यस्थ स्वरों की कल्पना करना भी है, जिसकी हमें इस स्थान पर अतीव आवश्यकता प्रतीत होती है क्योंकि इसका प्रमुख सम्बन्ध हमारे काव्याधार छन्द-शास्त्र से है।

डाक्टर सर जार्ज ग्रियर्सन को जिन्होंने हिन्दी भाषा में बहुत बड़ा पूर्ण ऐतिहासिक और वैज्ञानिक कार्य किया है, ऐसे स्वरों की आवश्यकता प्रतीत हुई और उन्होंने ऐसे स्वरों को अंग्रेजी भाषा की वर्ण-माला के द्वारा व्यक्त करने के लिए अपनी ओर से कुछ नये विधानों की कल्पना की। और भाषा की वर्ण-माला में भी ऐसे स्वरों के नये रूप दिये हैं :—

। देखो, लिङ्गुइस्टिक सर्वे आफ इंडिया भाग ३ अ० १।

डाक्टर साहय की इस कल्पना में एक ध्यान यह खटकता है कि उन्होंने 'ए' के विशेष रूप के लिए इसके रूप को उलटा कर के रक्खा है अर्थात् 'ए' के रूप का पिछला रूप ही उपयुक्त समझा है और 'ओ' के विशेष रूप के लिए 'ओ' के ऊपर वाली भाषा की बाई में घुमाने की अपेक्षा दाहिनी ओर में घुमा कर ही नया उसे ऊर्ध्वगत 'रेफ' का सा आकार देते हुए रख दिया है। हमें इन रूपों की अपेक्षा पृथक् धीयुत पं० रामशङ्कर जी शुक्ल

\* अन्य भाषाओं से किये हुए कुछ स्वरों के कुछ स्वरों के लिए भी इसे कुछ वर्णों के रखने एवं चढ़ने उपरिष्ठ वर्णों के बड़े स्वरों के बाने की व्यवस्था है।

† The Linguistic Survey of India



लिए भाषा की वर्ण-माला के कतिपय वर्णों में नये सुधार एवं संस्कार किये गये हैं, तथा अभी और नये सुधारों की आवश्यकता स्वतः है। इन नये सुधारों में से एक सुधार अथवा आधिष्कार कुछ हृस्व एवं दीर्घ स्वरों के मध्यस्थ स्वरों की कल्पना करना भी है, जिसकी हमें इस स्थान पर अतीव आवश्यकता प्रतीत होती है क्योंकि इसका प्रमुख सम्बन्ध हमारे काव्याधार इन्द्र-शास्त्र में है।<sup>१०</sup>

डाक्टर मर जार्ज ग्रियर्सन को जिन्होंने हिन्दी भाषा में बहुत खोज पूर्ण ऐतिहासिक और वैज्ञानिक कार्य किया है, ऐसे स्वरों की आवश्यकता प्रतीत हुई और उन्होंने ऐसे स्वरों की अंग्रेजी भाषा की वर्ण-माला के द्वारा व्यक्त करने के लिए अपने और से कुछ नये विधानों की कल्पना की; और भाषा की वर्ण-माला में भी ऐसे स्वरों के नये रूप दिये हैं:—

। देखो, लिङ्गुइस्टिक सर्वे आफ इंडिया भाग ३ अ० १.

डाक्टर साहय की इन कल्पना में एक बात यह खटकती है कि उन्होंने 'ए' के विजिष्ट रूप के लिए इसके रूप को उलटा कर के रक्खा है अर्थात् 'ए' के रूप का विज्ञेय रूप ही उपयुक्त समझा है और 'ओ' के विशेष रूप के लिए 'ओ' के ऊपर वाली मात्रा को वाई से घुमाने की अपेक्षा दाहिनी ओर से घुमा कर ही लगा उसे ऊर्ध्वगत 'रेफ' का सा आकार देते हुए रख दिया है। हमें इन रूपों की अपेक्षा पृथक् धीयुत ए० रामजङ्ग जी २४

<sup>१०</sup> अन्य भाषाओं के साथे कुछ कुछ भाषों के कुछ वर्णों के लिए -  
ये वर्णों के रखने एवं रखने उपरिष्ठित वर्णों के बड़े सुधारों के  
कारणक है।

<sup>१</sup> The Linguistic Survey



लिए भाषा की वर्ण-माला के कतिपय वर्णों में नये सुधार एवं संस्कार किये गये हैं, तथा अनेक और नये सुधारों की आवश्यकता रखते हैं। इन नये सुधारों में से एक सुधार अथवा आदिष्कार कुछ हल्के एवं दीर्घ स्वरों के मध्यस्थ स्वरों की कल्पना करना भी है, जिसकी हमें इस स्थान पर अतीव आवश्यकता प्रतीत होती है क्योंकि इसका अनुव नम्रगन्ध हमारे काव्याधार अन्ध-शास्त्र में है।<sup>१</sup>

डाक्टर मर जार्ज प्रियमन को जिन्होंने हिन्दी भाषा में बहुत खास पूर्ण ऐतिहासिक और वैज्ञानिक कार्य किया है, ऐसे स्वरों की आवश्यकता प्रतीत हुई और उन्होंने ऐसे स्वरों की अंग्रेजी भाषा की वर्ण-माला के द्वारा व्यक्त करने के लिए अपनी ओर से कुछ नये विधानों की कल्पना की; और भाषा की वर्ण-माला में भी ऐसे स्वरों के नये रूप दिये हैं:—

। देखो, लिगुइस्टिक सर्वे आक इंडिया भाग ३ अ० १।

डाक्टर माहब की इस कल्पना में एक बात यह स्पष्ट होती है कि उन्होंने 'ए' के विजिष्ट रूप के लिए इनके रूप को उलटा कर के रक्खा है अर्थात् 'ए' के रूप का विजोम रूप ही उपयुक्त समझा है और 'ओ' के विजोम रूप के लिए 'ओ' के ऊपर वाली नासा की बाईं से घुमाने की अपेक्षा दाहिनी ओर से घुमा कर ही तबला उसे ऊर्ध्वगत 'रेक' का सा आकार देने हुए रख दिया है। हम इन स्वरों की अपेक्षा पृथक् धीयुत एवं रामजद्वर ज्ञा ।

<sup>१</sup> अन्य भाषाओं में जैसे कुछ कुछ वर्णों से कुछ स्वरों के रूपों के रखने एवं रखने उपरिष्ठित वर्णों से बने हुए ।  
जगद्वर है ।

<sup>२</sup> Dr. Diez die Sans.

सरल वर्णों का प्रयोग होता है। संस्कृत की शब्दावली ऐसे परिष्कृत एवं परिमार्जित रूप में है कि उसके शब्दों में ह्रस्व एवं दीर्घ के बीच वाले स्वर के उच्चारण की आवश्यकता ही नहीं पड़ती, इसीलिए कदाचित् संस्कृत की वर्ण-माला में उसके निर्माणकर्ता विद्वानों ने ऐसे स्वरों को नहीं रखा। प्रत्येक भाषा की वर्ण-माला में सर्वेश्वर उन्हीं स्वरों एवं वर्णों का प्राधान्य रहता है जो उस भाषा के शब्दों में निरन्तर प्रयुक्त होते हैं। जो स्वर या वर्ण भाषा के किसी भी शब्द में नहीं आते वे स्वर या वर्ण उस भाषा की वर्ण-माला में कदापि नहीं रहते।

हिन्दी भाषा की शब्दावली में संस्कृत-शब्दावली की भी बात नहीं है, उसमें अनेकों ऐसे शब्द हैं, जिनके बोलने में ह्रस्व एवं दीर्घ स्वर के मध्यस्थ स्वर की आवश्यकता होती है, ऐसी वक्ता में ऐसे स्वरों का वर्ण माला में स्थान देना सर्वथा अनिवार्य है। यह बात विशेषतया उस समय अत्यन्त आवश्यक प्रतीत होगी है जब हम वक्ताभाषा तथाच अवधी भाषा की जिनका साहित्य में बहुत ऊँचा एवं मदन्य पूर्ण स्थान है, और जिनका पढ़ते बहुत समय तक हिन्दी के काव्य साहित्य में पूर्ण प्राधान्य रह चुका है और अब भी अधिकांश में पाया जाता है, शब्दावली उठाते हैं। हाँ, जब हम अपनी आधुनिक खड़ी बोली की परिष्कृत शब्दावली को लेते हैं, जो अब साहित्य के क्षेत्र में द्रुतगति के साथ अग्रसर हो रही है, तब हम इसकी आवश्यकता नहीं ज्ञात होते क्योंकि, परिष्कृत खड़ी बोली का शब्द-भण्डार संस्कृत के समान शुद्ध एवं परिमार्जित रूप में होकर ऐसे शब्द नहीं रखता जिनमें ह्रस्व और दीर्घ स्वरों के मध्यस्थ स्वर की आवश्यकता पड़ती हो। अन्य भाषाओं के प्रभाव से प्रभावित होने के कारण हमारी आधुनिक भाषा में शब्दों का एक बहुत बड़ा समुदाय ऐसा आ गया है जिसके













## सरस-पिङ्गल

‘साल’ एम० ए० के कल्पित किये हुए रूप अधिक उपयुक्त  
हैं—

क्योंकि इन रूपों में डाक्टर साहब के रूपों की भाँति विशेष  
वक्तव्य नहीं है, केवल ऊपर की मात्राओं को ही धीरे धीरे और से  
माने की अपेक्षा दाहिनी ओर से लगा कर उनके पूर्व रूपों से  
जोड़ना रूप में ही रख देना पड़ता है। इनमें न तो डाक्टर साहब  
की भाँति पूरे अक्षर को उलटना ही पड़ता है और न ‘ऊर्ध्व रेफ’  
के भ्रम होने का ही भय रहता है। हम फिर भी अपनी भाषा के  
विद्वानों का ध्यान इस ओर आकर्षित करते हैं और चाहते हैं  
कि या तो शीघ्र “रसाल” जी के ही रूप मान लिये जाय  
(जिनके मान लेने में कोई हानि एवं आपत्ति नहीं है) या दूसरे  
नये रूपों की व्यवस्था की जाय, जब तक ऐसा नहीं होता तब तक  
हम अपने पाठकों से इन्हीं रूपों के प्रयोग करने का अनुरोध  
करते हैं।

## कुछ अन्य आवश्यक छन्दें

नबि हम कुछ ऐसी छन्दों के नियम और दे रहे हैं जिनका  
प्रयोग खड़ी बोली के कई लघुप्रतिष्ठ कवियों ने किया है  
और जिनका प्रयोग संस्कृत के कवियों के द्वारा संस्कृत-काव्य में  
बाहुल्य के साथ हुआ है। हाँ, भाषा के माध्यमिक-काल में कवियों  
ने इनका अवश्य कम व्यवहार किया है।

## पञ्च चामर

यह वृत्ति मोहनदासों की होती है, तथा हममें लघु और दीर्घ  
के क्रम में छोट लघु और छोट दीर्घ वर्ण होते हैं अथवा प्रमाण

• छन्द का नाम ‘५’ और ‘५’ के रूप रचने के लिए •

होते हैं—

रगल, जगल, रगल, जगल और एक अन्तिम वर्ण गुरु होता है ;  
यथा : —

उत्ती उदार की कथा सरस्वती बखानती :

उत्ती उदार से घरा हुतार्थ-भाव मानती ।

उत्ती उदार की सदा सजीव कीर्ति-कृ. ॥ ;

तथा उत्ती उदार को तनस्त खटि पूजती ।

शित्तरिणी

यह वृत्ति १७ वर्णों की होती है, तथा इन्हें रगल, मगल,  
नगल, तगल, भगल, और अन्त में एक वर्ण लघु तथा एक वर्ण  
दीर्घ होता है ; यथा—

कहाँ स्निग्धा स्निग्धा, तन-वदन वाली रनरिणी ।

कहाँ निर्वाचा ये, कठिन वनचारों हरिणी ।

लुभाने वाली है, मृदुल-सुख-मग्ना भवन की ।

कहाँ ऐसी हा ! हा ! कठिन-धरणी है कुवन की ।

मन्दाक्रान्ता

यह वृत्ति चार, छः और सत्त अक्षरों पर विराम के साथ कुल  
१७ वर्णों अथवा रगल, भगल, नगल और दो तगल दो गुरु वर्णों  
से बनती है, यथा—

धैर्यम्यानन्द-रस झिलने, एक भी दार पाया ।

कोई भी क्या सुरस उत्तरे, वित्त की अन्य माया !

पा लेता है सुख-रस जो दिव्य एकान्तता में ।

मीठा पाया सुरस सुख है, गाल एकान्तता में ।

सरसी

सव्यस्त भावकों से मिलकर ११ और ११ पर वृत्ति देने हुए अन्त  
में गुरु और लघु के साथ सरसी-द्वन्द्व बनाया जाता है ; यथा—







माप मानि वैश्यौ पेंडि लाड़िलौ हमारौ ताकौ,  
 करि मनुहार सुधा-धार उपरार्ज<sup>०</sup> हम ।  
 साजै<sup>०</sup> सुख सम्पति के सकल समाज आज,  
 बलि 'रतनाकर' की नैसुक निशार्ज<sup>०</sup> हम ॥

### अभ्यासार्थ-प्रश्न

- १:—पिङ्गल-शास्त्र किसे कहते हैं और उसका क्या उद्देश्य है ।
- २:—काव्य और कविता की परिभाषायें देकर इनका अन्तर बताओ ।
- ३:—काव्य के कितने भेद हैं और उसका सङ्गीत से क्या और कितना सम्बन्ध है ।
- ४:—छन्द और वृत्ति में क्या अन्तर है और उनकी रचना का मूल आधार क्या है ।
- ५:—कविता में छन्द की क्यों और कितनी आवश्यकता है ।
- ६:—हिन्दी-भाषा ने छन्द-शास्त्र को क्या उपहार दिया है ।  
 उसका मार्मिक वर्णन करो ।
- ७:—माया ( कला ) किसे कहते हैं, कविता में उनका क्या स्थान है ।
- ८:—ह्रस्व एवं दीर्घ ( लघु और दीर्घ ) का सूक्ष्म-विवेचन करो ।
- ९:—यति और गति की परिभाषायें देते हुए कविता में उनका स्थान और उनसे सम्बन्ध रखने वाले गुण-दोषों का सनियम विवेचन करो ।
- १०:—गण क्या हैं और कितने हैं, इनकी रचना कैसे हुई ।

११:—गर्भों के शुभाशुभ उनमें कृष्ण और श्वेतों का मूलन पढ़ाने को ।

१२:—द्विधास्त्र किसे कहते हैं जन्म शुभ पक्षों का धिक्चन, उनसे सम्बन्ध रखने वाले काष्ठशुद्ध नियमों के साथ को ।

१३:—चन्द्र के कितने मुख्य भेद हैं मूलन रूप में लिखो ।

१४:—साधिक-कुन्दी और पक्षिक-वृत्तियों में क्या अन्तर है स्वरूप रूप में समझो ।

१५:—निर्ज्ञात पद जिन कुन्दी के अन्तर्गत हैं उनके मूलनियम लिखो:—

क:—कहने श्याम मन्दर आज मैं तुम पे आया ।

ख:—आज आया वसन्त

ग:—अर्गाहित काप मेना साथ न शक्ति केन्द्र ।

घ:—वर्षा बिना नाग वर्षाका का हुआ ।

च:—अधिक और वर्षा कितना सदैव ।

छ:—नर हो नर हो तुम कादर हो ।

ज:—जहाँ सदैव देव का रूपा विराजती रहो ।

झ:—सुनि रतनाकर को रचना रसीली नव ढीली परी धानहिं सुगीली करि ल्याऊं मैं ।

झ:—ज्ञाति रत राधन सौं ठाढ़े रघुनाथ हैंसै, जौरी जय विजय को ठाढ़ी चार हाथ हैं ॥

ट:—धनि धनि नरस धइलधा, जग अस्त कौन ।

ठ:—शुन नागर नागर नाथ विभो ।

ड:—कैसे बुलाइ तपाऊं तुम्हें इन ताती उसाँस सनीरन मैं ।



